(emotional state) के बारे में चेतन रूप से (consciously) प्रायः अवगत नहीं रहता है।

इन विशेषताओं से स्पष्ट है कि मनोदैहिक विकृति एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें मनोवैज्ञानिक कारकों एवं दैहिक लक्षणों का अनोखा संगम होता है।

मनोदैहिक विकृति के प्रकार
(Types of Psychosomatic Disorder)

मनोदैहिक विकृतियों (psychosomatic disorders) को मनश्चिकित्सकों (psyciatrists) तथा नैदानिक मनोवैज्ञानिकों (clinical pschologists) ने शरीर के प्रभावित होने वाले अंगों के आधार पर कई श्रेणियों में विभाजित किया है। अमेरीकन मनश्चिकित्सीय संघ (American Psychiatric Association, 1952) ने इसे निम्नांकित 10 भागों में बाँटा है–

---

1. "Psychophysiological or psychosomatic reactions might be described as neurotic-like conditions in which there is physical damage to one target bodily or organ system".
Sarason : *Abnormal psychology*, 1972, p. 305.

(1) मनोदैहिक हृदयवाहिका विकृतियाँ *(Psychophysiologic cardiovascular disorders)* इस श्रेणी में हृदय एवं रक्तवाहिकाओं (blood vessels) से संबंधित रोगों को रखा जाता है। इसमें हृदय गति में वृद्धि (tachycardia), एनजीनल संलक्षण (Anginal syndrome), हृदय रक्तधमनी की विकृति (coronary diseases), सिरदर्द, अधसीसी (migraine) आदि मुख्य रूप से आते हैं।

(2) मनोदैहिक आमाशयांत्र की विकृति *(Psychophysiologic gastrointestinal disorder)* इस श्रेणी में पाचन संस्थान (digestive tract) में उत्पन्न रोगों का रखा जाता है। इसमें एनोरेक्सीया नरवोसा (anorexia nervosa), बुलिमिया (bulimia), आँत का घाव (peptic ulcer), शोथ (colitis), पेचिश (dysentery), जठर-शोथ (gastritis) आदि प्रधान हैं।

(3) मनोदैहिक श्वसन विकृतियाँ *(psychophysiologic respiratory disorders)*–इस श्रेणी में श्वसन तंत्र (respiratory system) से संबंधित रोगों को रखा जाता है। इसमें आने वाले कुछ प्रमुख रोग हैं–श्वासनी दमा (broncial asthma), सामान्य सर्दी (common cold), फेफड़े का क्षय रोग (tuberclusis), उच्च श्वसन संलक्षण (hyperventilation syndrome)।

(4) मनोदैहिक त्वचा-संबंधी विकृतियाँ *(psychophysiologic skin disorder)*–इस श्रेणी में त्वचा में उत्पन्न रोगों को मूलत: रखा जाता है। इसमें न्यूरोडरमैटोशिश (neurodermatosis), खींचना एवं खुजलाहट (scraching and itching), एटोपिक डरमैटोशिश (atopic dermatosis) आदि को रखा जाता है।

(5) मनोदैहिक जननमूत्र विकृत्रियाँ *(psychophysiologic genitourinary disorders)*–इस श्रेणी में यौन अंगों से संबंधित रोगों को रखा जाता है। इसमें मूलत: मासिक धर्म संबंधी विकृतियाँ (menstual disorder), नपुंसकता (impotency), गर्भपात (abortion) आदि को रखा जाता है।

(6) मनोदैहिक अंत:स्त्रावी विकृतियाँ *(psychophysiologic endocrine disorders)*–इस श्रेणी में अंत:स्त्रावी ग्रन्थियों (endocrine glands) से संबंधित रोगों को रखा जाता है। इसमें मूलत: हाईपरथायरोडिज्म (hyperthyroidism) आदि जैसी अवस्थाओं को रखा जाता है।

(7) मनोदैहिक पेशीय-पंजरीय विकृतियाँ *(psychophysiologic musculoskeletal disorders)*–इस रोग में मूलत: पीठ का दर्द, मांशपेशियों में ऐंठन, तनाव, गठिया आदि को रखा जाता है।

(8) विशिष्ट प्रकार की ज्ञानेन्द्रियों से संबंधित मनोदैहिक विकृतियाँ *(psychophysiologic disorders of organs of special sense)*–इस श्रेणी में मूल रूप से चिरकालिक कनजंकटिभाइटिस (chronic conjuctivitis) तथा अन्य समान रोगों को रखा जाता है।

(9) हेमिक तथा लिम्फैटिक मनोदैहिक विकृतियाँ *(psychophysiological hemic and lymphatic disorders)*–इस रोग में खून एवं लिम्फैटिक तंत्र (lymphatic system) से संबंधित बीमारियाँ आती हैं।

(10) अन्यान्य प्रकार की मनोदैहिक विकृतियाँ *(psychosomatic disorders of other types)*– इस रोग में वैसे विकृतियों को रखा जाता है जिसमें तंत्रिका तंत्र (nervous system) में सांवेगिक कारकों (emotional factors) की भूमिका महत्वपूर्ण है। बहुस्कलरोसिस (multiple sclerosis) एक ऐसा ही रोग का उदाहरण है।

इस तरह से हम देखते हैं कि मनोदैहिक विकृति के 10 प्रकार हैं। इनमें से प्रथम पाँच प्रकार अंतिम पाँच प्रकार से अधिक महत्वपूर्ण एवं सामान्य बतलाया गया है। अत: इस पुस्तक में प्रथम पाँच प्रकारों एवं उनमें आने वाले रोगों की ही विशेष चर्चा की जाएगी।

मनोदैहिक हृदयवाहिका विकृतियाँ
(Psychophysiological Cardiovascular Disorders)

हृदयवाहिका की विकृति सबसे सामान्य मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) है। जैसा कि हम जानते हैं, सांवेगिक तनावों (emotional stresses) के प्रति हृदय सबसे अधिक संवेदनशील अंग है। तीव्र उत्तेजन की संवेगात्मक अवस्था उत्पन्न होते ही हृदय की धड़कन अनियमित हो जाती है, रक्त-चाप में वृद्धि हो जाती है, नाड़ी भी तेज हो जाती है तथा मांशपेशियों में रक्त की आपूर्ति बढ़ जाती है एवं अन्तरावयवों (visceral organs) में रक्त की आपूर्ति कम हो जाती है। विषाद (depression) की संवेगात्मक अवस्था उत्पन्न होने पर हृदय गति मंद पड़ जाती है तथा रक्त-चाप भी घट जाता है। मैंनजर तथा क्रगउस (Mainser & Krause, 1940) ने अपने अध्ययन में पाया कि इस तरह की मनोवैज्ञानिक अवस्था अर्थात् सांवेगिक अवस्था के सतत् (continuous) बने रहने से व्यक्ति में इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (Electrocardiogram or EKG) की गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है।

हृदयवाहिका की विकृति (cardiovascular disorders) में निम्नांकित विकृतियाँ अधिक सामान्य हैं–

(क) हृदयगति में वृद्धि (Tachycardia)

(ख) एनजाइनल संलक्षण (Anginal syndrome)

(ग) उच्च रक्त चाप या आवश्यक हाइपरटेंशन (High blood pressure or Essential hypertension)

(घ) हृदय-रक्तधमनी की विकृति (Coronary diseases)

(क) हृदयगति में वृद्धि *(Tachycardia)*–यह एक ऐसी विकृति (disorder) है जिसमें रोगी के हृदय गति में वृद्धि होने के साथ-ही-साथ हृदय सामंजस्य (heart rhythm) में अनियमितता होती है। इस तरह के रोगी जो अपने आंतरिक संघर्षों (inner conflicts) की अभिव्यक्ति तीव्र हृदय गति एवं अनियमित हृदय सामंजस्य (heart rhythm) के माध्यम से करता है, कमजोरी महसूस करता है और कभी-कभी उसे साँस लेने में कठिनाई का भी अनुभव करता है। विकृति (disorder) जब गंभीरता की स्थिति में आ जाती है, तो रोगी में मानसिक शून्यता या बेहोशी भी उत्पन्न हो जाती है। अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि इस विकृति में नाड़ी की गति जो सामान्यत: 72 स्पन्दन (beats) प्रति मिनट होता है, बढ़कर 150 स्पन्द

(beats) या उससे अधिक भी हो जाता है। हृदयगति में वृद्धि (tachycardia) का प्रकोप (attack) किसी भी समय तथा किसी भी परिस्थिति में हो सकता है। किश्कर (Kisker, 1964) ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह बतलाया है कि यह विकृति (disorder) उन व्यक्तियों (individuals) में अधिक होता है जिनमें प्रतियोगिता (competition) की भावना तो काफी होती है परंतु प्रतियोगिता में असफलता होने का डर भी उतना ही अधिक होता है।

(ख) एनजाइनल संलक्षण *(Anginal syndrome)*–इस तरह की विकृति (disorder) में रोगी की छाती में अचानक तीव्र एवं जानलेवा दर्द हो जाता है। कभी-कभी इस तरह का दर्द के कारण तो कायिक हृदय रोग (organic heart disease) होता है परन्तु जब इस रोग का स्वरूप (nature) मनोदैहिक (psychophysiological) होता है तो इस तरह के दर्द का कारण कोई-न-कोई सांवेगिक संघर्ष (emotional conflict) होता है। इस रोग के कई कारण बतलाये गए हैं जिनमें शारीरिक तंत्र (body system) का कमजोर होना, सामाजिक अनुबंधन (social conditioning) तथा किसी संघर्ष को सांकेतिक रूप से व्यक्त करने की आवश्यकता आदि प्रधान हैं। किश्कर (Kisker, 1964) ने एनजाइनल दर्द (anginal pain) का एक ऐसा केस का उदाहरण दिया है जिसमें एक पुरुष रोगी ने अपने डाक्टर को बतलाया कि उसकी छाती में इतना दर्द होता है मानों उसकी छाती फट रही हो। उपचार के दौरान यह पता चला कि इसका कारण एक तीव्र सांवेगिक आघात (emotional shock) था जिसका कारण उसकी पत्नी का गैर पुरुष के साथ अनैतिक संबंध था। अंत में डाक्टर की सलाह पर जब पत्नी ने गैर पुरुष के साथ अपने अनैतिक संबंध को समाप्त किया, तो पति का एनजाइनल दर्द भी धीरे-धीरे कमने लगा और फिर समाप्त हो गया।

(ग) आवश्यक हाइपरटेंशन या उच्च रक्तचाप *(Essential hypertension or high bood pressure)*–हाइपरटेंशन या उच्च रक्त चाप हृदयवाहिका विकृतियाँ (cardiovascular disorders) में सबसे अधिक सामान्य विकृति है। बिना किसी तरह के स्पष्ट आंगिक कारण के ही हाइपरटेंशन का होना को आवश्यक हाइपरटेंशन कहा जाता है। इस विकृति में, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, शरीर में रक्तचाप (blood prssure) बढ़ जाता है तथा रोगी में सिरदर्द चिड़चिड़ापन, अन्यमन्यस्कता आदि लक्षण स्पष्ट रूप से दिखते हैं। हाइपरटेंशन के कुछ ऐसे केसेज होते हैं जिनमें तो इस रोग का कारण शारीरिक (bodily) होता है और इन केसेज को मनोदैहिक विकृति (psychological disorder) में नहीं रखा जाता है। परन्तु हाइपरटेंशन के कुछ ऐसे केसेज होते हैं जिनका कारण स्पष्टत: शारीरिक न होकर सांवेगिक (emotional) होता है जिन्हें हम मनोदैहिक विकृति में रखते हैं।

मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों (clinical psychologists) ने हाइपरटेंशन (hypertension) की सांवेगिक उत्पत्ति (emotional origin) की व्याख्या करने के कई सिद्धांत (theory) का वर्णन कियाएँ है। इन्नस् (Innes, 1969) के सिद्धान्त के अनुसार कुछ व्यक्ति अपने व्यक्तित्व में क्रोध (anger) एवं रोष (rage) का तूफान छिपा रखते हैं भले ही वह ऊपर से शांत दिखाई देते हैं। ऐसे व्यक्तियों में हाइपरटेंशन का रोग उत्पन्न होने की संभावना तीव्र होती है। इन्नस् (Innes, 1969) ने हाइपरटेंशन के रोगियों के व्यक्तित्व के शीलगुणों (traits) का अध्ययन किया और बतलाया है कि ऐसे व्यक्तियों का माँ के साथ घनिष्ठ संबंध होता है, इनमें दूसरों पर निर्भर रहने की आदत होती है, आत्म-विश्वास की क्रमी

एवं असुरक्षा के भाव की क्षतिपूर्त्ति के रूप में आदर्शपूर्ण व्यवहार (perfectionistic behaviour) दिखलाने की आदत होती है। ऐसे रोगियों में आदर्शपूर्ण व्यवहार (perfectionistic behaviour) दिखलाने की आदत होती है। ऐसे रोगियों में जिंदगी की कठिनाइयों से बचने के लिए कुछ विशेष औषध (drugs) सेवन करने की आदत तथा साथ-ही-साथ भोजन अधिक करने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है।

(घ) हृदय-धमनी विकृति *(Coronary diseases)*–हृदय वाहिका विकृतियों (cordio-vascular disorders) में हृदय-रक्तधमनी की विकृति भी एक सामान्य विकृति है और इस रोग से मरने वालों की संख्या भी काफी है। इस रोग में हृदय में खून की आपूर्त्ति करने वाली धमनियों (arteries) में रक्त का थक्का जम जाता है जिसके कारण हृदय को खून की आपूर्त्ति उतनी नहीं हो पाती है जितनी की होनी चाहिए और वह बीमार पड़ जाता है। इससे हृदय के कुछ उत्तकें (tissues) भी नष्ट हो जातीं हैं और रोगी में दिल का दौरा पड़ता है और वह जिन्दगी और मौत के बीच जूझने लगता है। इस रोग का आधार शारीरिक (physiological) होता है परंतु कुछ केसेज में इसका कारण मनोवैज्ञानिक (psychological) भी होता पाया गया है। अध्ययनों से पता चला है कि सांवेगिक तनाव (emotional stress) इस रोग का सबसे प्रमुख कारण है। फ्रिडमैन तथा रोजेनमैन (Friedman & Risenman, 1958) के अध्ययन के अनुसार टाईप-ए-व्यवहार (Type-A-behaviour) वाले व्यक्ति में हृदय धमनी विकृति होने की संभावना अधिक होती थी। उच्च महात्वाकांक्षा, तीव्र प्रतियोगिता, व्यग्रता आदि टाईप-ए-व्यवहार के कुछ प्रमुख लक्षण हैं। क्रोगर (Kroger, 1990) के अनुसार सांवेगिक तनाव एवं चिंता के कारण हृदय की मांशपेशियों (cardiac muscles) में उत्तेजना अधिक बढ़ जाती है, रक्त प्रवाह में परिधीय अवरोध (peripheral resistance) बढ़ जाता है तथा रक्त जमने की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है। ये सभी कारक आपस में मिलकर हृदय को कमजोर (weak) कर देते हैं और व्यक्ति इस रोग का शिकार हो जाता है। जोन्स (Jones, 1982) ने एक अध्ययन कर सांवेगिक तनाव एवं खून जमने की प्रक्रिया में धनात्मक सहसंबंध (positive correlation) दिखलाया है। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि शांत प्रकृति के व्यक्तियों के शरीर से निकले खून को जमने में करीब 8 से 12 मिनट का समय लगा, शंकालु प्रकृति के व्यक्तियों के शरीर से निकले खून को जमने में 4 से 5 मिनट का समय लगा तथा अत्यधिक व्यग्र, उत्तेजित एवं डरे हुए व्यक्ति के शरीर से निकले खून को जमने में मात्र 1 से 3 मिनट का समय लगा। अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति में संवेगात्मक तनाव एवं व्यग्रता होने से खून में जल्द जमने की प्रवृत्ति तीव्र हो जाती है। शायद यही कारण है कि जब किसी व्यक्ति में संवेगात्मक तनाव की स्थिति चिरकालिक (chronic) होती है, तो उनके उन रक्त नलिकाओं में खून जल्दी जमने लगता है जो हृदय को खून की आपूर्त्ति (supply) करता है। नतीजन, व्यक्ति में हृदय-रक्तधमनी की विकृति (coronary disease) उत्पन्न हो जाता है।

मनोदैहिक आमाशांत्र की विकृतियाँ
(Psychophysiologic Gastrointestinal Disorders)

इस रोग में व्यक्ति अपने सांवेगिक तनावों (emotional tension) की अभिव्यक्ति उन

भागों में रोग उत्पन्न करके करता है जो पाचन संस्थान (digestive systems) से जुड़े होते हैं। पाचन संस्थान द्वारा मूलत: तीन प्रमुख क्रियाएँ होती हैं (i) पाचन क्रिया (digestive functions) (ii) शोषण की क्रिया (absorption), तथा (iii) मल-मूत्र त्यागने की प्रक्रिया (eliminative functions)। इन सभी क्रियाओं का नियंत्रण स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (autonpomic nervous system) द्वारा होता है। जब व्यक्ति तनावपूर्ण स्थिति में काफी दिनों से होता है, तो सामान्य स्वायत्त कार्य (normal autonomic function) प्रभावित हो जाते हैं जिनसे पाचन संस्थान की क्रियाओं में गड़बड़ी हो जाती है और धीरे-धीरे व्यक्ति मनोदैहिक आमाशायांत्र की विकृतियों (physiological gastrointestinal disorders) से ग्रसित हो जाते हैं। इस श्रेणी में आने वाली प्रमुख विकृतियाँ (disorders) निम्नांकित हैं–

(क) आँत का घाव (Peptic Ulcer)

(ख) एनोरेक्सीया नरभोसा (Anorexia Nervosa)

(ग) बुलिमिया (Bulimia)

(घ) जठर-शोथ (Gastritis)

(ङ) वृहदान्त्र शोथ (Colitis)

इन विकृतियों के नैदानिक स्वरूप (clinical picture) तथा कारणों (etiologies) का वर्णन निम्नांकित है–

(क) आँत का घाव *(Peptic ulcer)*–इस रोग में प्राय: छोटी आँत (small intestine) के ऊपरी हिस्से में या आमाशय (stomach) में एक खुला मुँह का जख्म या घाव हो जाता है। इस रोग का मुख्य लक्षण भोजन करने के एकाध-घंटे बाद पेट में दर्द का होना है। दर्द के साथ-साथ प्राय: कै होता है या मिचली भी आती है। अत्यधिक गंभीर अवस्था होने पर रोगी के पेट के भीतर रक्त निकलता है जो मुँह के रास्ते कभी-कभी कै के द्वारा बाहर भी निकलने लगता है। अध्ययनों से पता चला है कि आँत का घाव उत्पन्न करने में अमाशय रस (gastric juice) का महत्त्व काफी अधिक है। इस तरह की सार्थकता को सबसे पहले-पहल जॉन यंग (John Young) द्वारा 1803 में पेन्सिलवानिया विश्वविद्यालय (University of Pennsylvania) में दिखलाया गया था। इस अमाशय रस (gastric juice) में तीन प्रमुख तत्त्व होते हैं–मुकस (mucus), पेपसिन (pepsin) तथा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (hydrochloric acid) । इसमें से हाइड्रोक्लोरिक अम्ल ही आँत का घाव (peptic ulcer) उत्पन्न करने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आँत के घाव से प्रभावित प्रत्येक रोगी में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की अधिकता देखी गयी है।

आँत के घाव (peptic ulcer) की उत्पत्ति में सतत सांवेगिक तनाव (persistent emotional stress) का महत्त्व काफी बतलाया गया है। जब व्यक्ति इस तरह के सांवेगिक तनाव में अधिक दिनों से होता है तो वेगस तंत्रिका (vagus nerve) का कार्य प्रभावित हो जाता है। वेगस तंत्रिका (vagus nerve) एक ऐसा तंत्रिका होता है जो आमाशय रस (gastric juice) तथा आमाशय के क्रमाकुंचक गति (peristaltic motions) को नियंत्रित करता है। वस्तुत:, सतत या चिरकालिक सांवेगिक तनाव (persistent or chronic emotional tension)

के होने से वेगस तंत्रिका पर नियंत्रण करीब-करीब हट जाता है और काफी अधिक मात्रा में आमाशय रस निकलने लगता है जो धीरे-धीरे आमाशय के दीवार को गलाने लगता है जिससे अंतत: आँत का घाव (peptic ulcer) उत्पन्न हो जाता है।

आँत के घाव की उत्पत्ति में सांवेगिक तनाव (emotional stress) के महत्त्व को ब्रैडी (Brady, 1958) द्वारा एक प्रयोग में भी दिखलाया गया है। यह प्रयोग इस क्षेत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। यह प्रयोग दो बंदरों पर किया गया था। इन दोनों बन्दरों को अगल-बगल में विशेष कुर्सी पर बैठाया गया। इनमें से एक बंदर के बगल में एक लीभर (lever) लगा था जिसे दबा देने से बिजली का शॉक न तो उसे लगता था और न ही उसके बगल वाले बन्दर को। इस बंदर को कार्यपालक बन्दर (executive monkey) कहा गया। दूसरे बन्दर के बगल में भी इसी तरह का लीभर (lever) लगा था परन्तु इस लीभर के दबाने या न दबाने से बिजली के शॉक का कोई संबंध नहीं था। इस बंदर को नियंत्रित बंदर (control monkey) की संज्ञा दी गयी। दोनों बन्दरों को प्रतिदिन 6 घंटा का सत्र (session) दिया गया जिसमें लीभर दबाकर बिजली के आघात (electric shock) से छुटकारा पाने की अनुक्रिया को सीखना था। इसमें देखा गया कि 24वाँ दिन अचानक कार्यपालक बन्दर (executive monkey) आघात-बचाव सत्र (shock-avoidance session) के दौरान मर गया हालांकि उसकी तबीयत पहले बिल्कुल ही ठीक थी। इसके बाद उसकी शव-परीक्षा (autopsy) की गयी तो देखा गया कि छोटी आँत के ऊपरी भाग (upper intestine) पर घाव हो गया था अर्थात् उसमें आँत का घाव (peptic ulcer) विकसित हो गया था। उसके कुछ घंटों के बाद नियंत्रित बन्दर (control monkey) को जान से मार दिया गया और उसकी शव परीक्षा (autopsy) की गयी तो पाया गया कि उसमें किसी प्रकार की कोई आमाशायांत्र की विकृति (gastrointestinal disorder) नहीं थी। ब्रैडी (Brady, 1958) के अनुसार कार्यपालक बन्दर (executive monkey) में सांवेगिक तनाव (emotional tension) नियंत्रित बन्दर (control monkey) में सांवेगिक तनाव की अपेक्षा अधिक थी, क्योंकि इसमें इस बात की चिंता बनी रहती थी कि वह जल्द-से-जल्द लीभर दबाकर स्वयं अपने आप को एवं अपने साथी को किस तरह से बचा सके। नियंत्रित बन्दर में ऐसी कोई चिंता नहीं थी। इस प्रयोग के परिणाम से यह स्पष्ट हो जाता है कि आँत का घाव (peptic ulcer) उत्पन्न करने में सांवेगिक तनाव (emotional tension) की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण होती है।

होगर-पेटरसन (Hoger-Peterson, 1958) ने कई पशुओं पर प्रयोग करके एवं साथ-ही-साथ मानव रोगियों का नैदानिक प्रेक्षण (clinical observations) करके यह बतलाया है कि यह रोग उन मनुष्यों तथा पशुओं में अधिक होता है जिनमें प्रतियोगिता की भावना काफी अधिक होती है तथा साथ-ही-साथ जो अपने आप को हमेशा किसी-न-किसी काम में व्यस्त रखते हैं।

(ख) एनोरेक्सीया नरभोसा *(Anorexia Nervosa)*–यह एक मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) है जिसमें रोगी को भूख नहीं लगती है। इस तरह की विकृति (disorder) को सबसे पहले सर विलियम गल (Sir William Gull) ने 1874 में दिखलाया था। इस विकृति में रोगी के शरीर का वजन धीरे-धीरे कमता जाता है और बिना किसी कायिक रोग (organic pathology) के ही रोगी में भूख धीरे-धीरे कमती चली जाती है। यह

रोग कम उम्र की औरतों में अधिक होता पाया गया है और इसमें कुछ अन्य लक्षण जैसे मासिक धर्म की गड़बड़ी (menstrual disturbances), धीमी हृदय गति (slow heart rate) तथा अन्य चयापचयी गड़बड़ियाँ (metabolic disturbances) प्रधान हैं।

एनोरेक्सीया (anorexia) की शुरूआत बचपनावस्था में ही हो जाता है। ऐसे बालक जिन्हें कम भूख लगती है वे अपने आप में एक संवेगात्मक समस्या (emotional problems) बन जाते हैं और फिर माता-पिता द्वारा खाना खाने पर बल दिया जाना ऐसी संवेगात्मक समस्याओं को और भी बढ़ा-चढ़ा देता है जिससे रोग की प्रगति तेज हो जाती है। लेसर (Lesser, 1960) ने अपने अध्ययन के आधार पर बतलाया है कि इस तरह की विकृति उन बालकों या व्यक्तियों में अधिक विकसित होती है जिन्हें मातृत्व अतिरक्षा (maternal overprotection) मिला होता है। एनोरेक्सीया नरभोसा (anorexia nervosa) के कुछ ऐसे भी केसेज मिले हैं जिसमें देखा गया है कि रोगी के घरों में कुछ विशेष अवांछनीय तत्त्व (undesirable element) जैसे माँ एवं बेटी में विद्वेषता (hostility) आदि देखे गए हैं। लैंगिक समायोजन (sexual adjustment) में गड़बड़ी तथा कुंठा से भी एनोरेक्सीया नरभोसा (anorexia nervosa) की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

(ग) बुलिमिया *(Bulimia)*–बुलिमिया एक ऐसी मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) है जिसमें रोगी अत्यधिक खाना खाता है जिसके कारण उसमें मोटापन (obesity) बढ़ जाता है। इस तरह से यह मनोदैहिक विकृति एनोरेक्सीया नरभोसा (anorexia nervosa) से विपरीत की स्थिति होती है। मोटापा कभी-कभी कुछ अंतःस्रावी ग्रन्थियों (endocrine glands) की गड़बड़ी के कारण भी उत्पन्न हो जाता है तो ऐसी अवस्था निश्चित रूप से मनोदैहिक (psychophysiological) नहीं होता है। कुछ ऐसे भी केसेज होते हैं जिसमें मोटापा का कारण, सांवेगिक प्रतिक्रिया (emotional reactions) होती है। इस कारण से उत्पन्न विकृति (disorder) मनोदैहिक होता है। कुछ मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) ने बुलिमिया (bulimia) में अत्यधिक खाने के व्यवहार को किसी अपूर्ण आवश्यकता (unfulfilled need) का एक प्रतिस्थापित संतुष्टि (substitute satisfaction) माना है। अध्ययनों से पता चला है कि महिलाओं में अतिभक्षण (overeating) का कारण पुरुषों या विवाह के प्रति अचेतन स्तर पर एक तरह का विरोध (protest) करना होता है।

बुलिमिया (bulimia) के कारण की व्याख्या मनोविश्लेषकों (psychoanalysts) द्वारा भी किया गया है। मनोविश्लेषण सिद्धान्त (psychoanalytic theory) के अनुसार बुलिमिया के रोगी में मनोलैंगिक विकास (psychosexual development) के मुखावस्था (oral phase) से संबंधित गड़बड़ी (disturbance) पायी जाती है। जैसा कि हम जानते हैं, मनोलैंगिक अवस्था के मुखावस्था में बालक मुँह-संबंधी क्रियाओं एवं खाने-पीने की क्रियाओं में सर्वाधिक दिलचस्पी लेता है। अगर इस अवस्था की समस्याएँ जो मूलतः उपर्युक्त क्रियाओं (activities) से संबंधित होती हैं, को ठीक ढंग से समाधान नहीं किया, तो मुखावस्था की आवश्यकताएँ वयस्कावस्था तक बनी रहतीं हैं जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति वयस्कावस्था में अतिभक्षण (overeating) जैसा व्यवहार करता है।

(घ) जठर-शोथ *(Gastritis)*–यह एक ऐसी मनोदैहिक विकृति है जिसमें रोगी में अपच

(indigestion), अतिअम्लता (hyperacidity), घिचली (nausea), अत्यधिक गैस का होना आदि लक्षण पाये जाते हैं। कई अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि जठर-शोथ के उक्त लक्षण का संबंध चिंता, क्रोध तथा आत्मदोष (self-accusation) जैसी भावनाओं से अधिक है। जठर-शोथ के कई कारण मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) द्वारा बतलाये गए हैं जिसमें एक प्रमुख कारण अनुबन्धन (conditioning) माना गया है। अगर बालक अपने परिवार में यह देखता है कि जब-जब किसी तरह का मनोवैज्ञानिक तनाव (psychological tension) माता या पिता के सामने आता है, तब उनमें (माता-पिता में) उक्त लक्षण विकसित हो जाते हैं। इस तरह का प्रेक्षण (observation) कई बार किये जाने पर बालक भी किसी तरह के सांवेगिक तनाव या मानसिक संघर्ष की अवस्था उत्पन्न होने पर जठर-शोथ का लक्षण विकसित कर प्रतिक्रिया (reaction) व्यक्त करना सीख लेता है। होगर-पेटरसन (Hoger-Peterson, 1958) ने अपने अध्ययन में पाया कि जठर-शोथ का रोग उन व्यक्तियों में अधिक विकसित होता है जिनमें प्रभुत्व (dominance) का शीलगुण अधिक होता है जिनके भाई-बहनों में आपस में विद्वेष (hostility) अधिक होता है तथा प्राधिकार (authority) के प्रति भीतर-भीतर प्रतिशोध एवं आक्रमकता (aggressiveness) का भाव अधिक होता है।

(ङ) वृहदान्त शोथ *(colitis)*–यह एक ऐसा मनोदैहिक विकृति (psychophysiological disorder) है जिसमें बहुत तरह के लक्षण (symptoms) पाये जाते हैं जिनमें मूलतः अतिसार (diarrhoea), कब्जियत (constipation), पेट में दर्द तथा पैखाना में खून का आना सम्मिलित है। कुछ ऐसे केसेज होते हैं जिनमें उक्त लक्षण का कारण शारीरिक (bodily) होता है। अतः इन केसेज को मनोदैहिक (psychosomatic) नहीं माना जा सकता है। परंतु कुछ ऐसे केसेज होते हैं जिनमें इन लक्षणों का कारण पूर्णतः मनोवैज्ञानिक (psychological) होता है। ऐसे केसेज स्पष्टतः मनोदैहिक विकृति (psychosomatic disorder) के उदाहरण होते हैं। ह्वाईट (White, 1939) ने अपने अध्ययन में पाया कि इस रोग की उत्पत्ति में सांवेगिक तनाव की भूमिका का अधिक महत्त्व होता है। उन्होंने वृदान्त शोथ (colitis) को दो भागों में बाँटा है–म्यूकस वृहदान्त शोथ (mucous colitis) तथा अल्सरेटिव वृहदान्त शोथ (ulcerative colitis)।

म्यूकस वृहदान्त शोथ (mucous colitis) का प्रधान लक्षण यह है कि इसमें रोगी को खून तथा म्यूकस (mucous) मिला हुआ पैखाना होता है। सामान्यतः रोगी में भूख कम हो जाती है और वह अपच (indigestion) का शिकार हो जाता है। रोगी का पेट भारी रहता है तथा खाना खाने के बाद पेट में दर्द का अनुभव प्रारंभ हो जाता है। अल्सरेटिव वृहदान्त शोथ (ulcerative colitis) में वृहदान्त (colon) का म्यूकोसा (mucosa) कमजोर पड़ जाता है जिससे उसमें घाव हो जाता है और उससे खून निकलने लगता है।

चाहे म्यूकस वृहदान्त शोथ हो या अल्सरेटिव वृहदान्त शोथ (ulcerative colitis), इसकी उत्पत्ति प्रायः सांवेगिक कारणों से होता पाया गया है। सांवेगिक कारणों में परिवार में किसी की मृत्यु, संबंध विच्छेद (divorce), नौकरी का छूटना तथा अन्य सामान्य कारकों द्वारा इस रोग की उत्पत्ति होता पाया गया है। गारमा (Garma, 1950) ने अपने अध्ययन में पाया कि वृहदान्त शोथ (colitis) उन व्यक्तियों में अधिक विकसित होता है जिनकी बुद्धि का स्तर सामान्य या सामान्य से ऊँचा होता है परंतु इनमें उपयुक्त सांवेगिक अनुभूतियों (emotional excperience)

की कमी होती है। जब-जब ऐसे व्यक्तियों के सामने किसी भी तरह की सांवेगिक कठिनाई उत्पन्न होती है, उनमें विषाद (depression) तथा आँत-संबंधी गड़बड़ी (bowel disturbances) उत्पन्न हो जाती है। ब्राउन (Brown, 1938) के अनुसार इस तरह का रोग उन व्यक्तियों में अधिक होता है जिनमें आत्म-स्नेह (narcissicism) की भावना अधिक होती है तथा जिनका ध्यान अपने शरीर के अंगों के कार्यों पर जरूरत से ज्यादा होता है। मनोलैंगिक विकास का स्तर ऐसे व्यक्तियों में अपरिपक्व (immature) होता है।

स्पष्ट हुआ कि मनोदैहिक आमाशांत्र की विकृति के कई प्रकार होते हैं। प्रत्येक प्रकार में सांवेगिक तनाव (emotional stress) तथा मनोवैज्ञानिक संघर्ष (psychological conflict) की प्रधानता होती है।

मनोदैहिक श्वसन विकृतियाँ
(Psychophysiologic Respiratory Disorders)

मनोदैहिक श्वसन विकृतियाँ (psychophysiologic respiratory disorders) वैसी विकृतियाँ हैं जिसमें रोगी को श्वास-संबंधी कठिनाइयाँ होती हैं। ऐसा देखा गया है कि जब-जब रोगी संवेगात्मक तनाव एवं चिन्ता की परिस्थिति से घिर जाता है, उसमें श्वास संबंधी विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। कभी तो उसे दम घुटने का अनुभव होता है तो कभी उसे फेफड़ों में काफी कम दबाव का अनुभव होता है। इस श्रेणी में आने वाले कुछ प्रमुख विकृतियाँ इस प्रकार हैं–

(क) श्वसनी दमा (Bronchial Asthma)

(ख) सामान्य सर्दी (Common cold)

(ग) अतिश्वसन संलक्षण (Hyperventilation syndrome)

(घ) यक्ष्मा या टी० बी० (Tuberculosis)

इन सबका वर्णन निम्नांकित है–

(क) श्वसनी दमा *(Bronchial Asthma)*–यह एक ऐसी विकृति (disorder) है जिसमें श्वसनी मांशपेशियों (bronchial muscles) में ऐंठन (spasma) से रोगी को श्वास लेने में कठिनाई होती है। मनोदैहिक श्वसन विकृति में इस रोग का कारण सांवेगिक तनाव एवं चिंता माना गया है। इस रोग में श्वसनी म्यूकोसा (bronchial mucosa) में फूलन (inflammation) उत्पन्न हो जाता है तथा साथ-ही-साथ रोगी की छाती में ऐंठन होता है तथा उसमें खांसी तथा श्वास में घरघराहट (wheezing) आदि भी होता है। कुछ ऐसे भी केसेज देखे गए हैं जिनमें इन लक्षणों का कारण किसी खास तरह के तत्त्वों को व्यक्ति द्वारा सूंघ लिया जाना है या खा जाना होता है। परंतु अधिकतर केसेज में इस तरह के रोग का कारण मनोवैज्ञानिक (psychological) होता है।

मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों (clinical psychologists) ने कई ऐसे बालक जो इस रोग से ग्रस्त थे, के व्यक्तित्व शीलगुणों (personality characteristics) का अध्ययन किया ताकि यह निश्चित किया जा सके कि किन-किन तरह के शीलगुण वाले बालकों में यह रोग विकसित होता है। न्यूहॉस (Neuhaus, 1958) ने एक ऐसा ही अध्ययन किया और उसके आधार पर यह बतलाया कि श्वसनी दमा (bronchial asthma) के रोग से

प्रभावित बालक प्रायः औसत बुद्धि (average intelligence) से ऊपर के होते हैं, और इनमें चिड़चिड़ापन, आक्रमकता तथा आत्म-विश्वास की कमी पायी जाती है। कनैप एवं उनके सहयोगियों (Knappe et al, 1957) ने एक ऐसा ही अध्ययन किया है जो श्वसनी दमा (bronchial asthma) के रोग से ग्रसित थे। उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि ऐसे वयस्कों में मातृत्व निर्भरता (maternal dependence) का एक लंबा इतिहास होता है और जब-जब इनके सामने सांवेगिक परिस्थिति ऐसी आ जाती है जिससे इन्हें माँ से अलग होने की संभावना बढ़ जाती है, तो इस रोग के लक्षण उभर कर सामने आ जाते हैं।

मनोविश्लेषण सिद्धान्त (Psychoanalytic theory) के अनुसार श्वसनी दमा (bronchial asthma) का कारण स्वयं के प्रति या अन्य दूसरों के प्रति एक तरह की आक्रामकता (aggression) बतलाया गया है। श्वसनी दमा का लक्षण विकसित करके रोगी अपने प्रति एक तरह की आक्रामकता का लक्षण दिखलाता है। कभी-कभी रोगी का लक्षण इतना गंभीर हो जाता है कि दूसरे लोग भी उसे ठीक ढंग से सहायता चाहकर भी नहीं कर पाते और तब ऐसी परिस्थिति में रोगी एक तरह से दूसरों के प्रति आक्रामकता (aggressiveness) दिखलाता है। कुछ मनोविश्लेषकों (psychoanalysts) का मानना है कि रोग का कारण क्रोध एवं चिंता का दमन (repression) होता है। कुछ अन्य मनोविश्लेषकों का मत है कि दमा (asthma) का कारण दूसरों से मदद मिलने की दमित इच्छा तथा अकेले न रहने का एक तरह का शैशव आग्रह (infantile appeal) होता है। मनोविश्लेषकों का मानना है कि श्वसनी दमा उन व्यक्तियों में प्रायः होता है जो कंजूस प्रकृति के होते हैं। जब-जब ऐसे व्यक्तियों को आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है तब-तब इनमें श्वसनी दमा (bronchial asthma) के लक्षण उभर आते हैं।

इस तरह से स्पष्ट हुआ कि श्वसनी दमा के कई कारण हैं। आधुनिक मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) की आम राय यह है कि श्वसनी दमा की उत्पत्ति में एक संवेदनशील स्वायत्त तंत्र (sensitive autonomic system), एलर्जी (allergy) की प्रवृत्ति (tendency) तथा सांवेगिक तनाव (emotionless stress) का एक अनोखा संगम होता है।

(ख) सामान्य सर्दी *(Common cold)*–कुछ ऐसे भी सबूत मिले हैं जिनके आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जाता है कि सामान्य सर्दी (common cold) में सांवेगिक तत्त्वों (emotional components) की प्रधानता होती है। कुछ केसेज में सामान्य सर्दी, कुंठा (frustration), चिड़चिड़ापन (irritation), ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने की आवश्यकता, दुखद परिस्थितियों (unpleasant situations) से दूर रहने की आवश्यकता आदि का प्रतिफल या प्रतिक्रिया होता है। मीरलू (Meerloo, 1958) ने अपने अध्ययन में पाया कि जब व्यक्ति तनावपूर्ण परिस्थिति (stress situation) में होता है तो उसमें सामान्य सर्दी (common cold) विकसित करने की संभावना अधिक होती है। मनोवैज्ञानिक रूप से (psychologically) सामान्य सर्दी अनेकों तरह के उद्देश्यों (purposes) को पूरा करता है। सामान्यतः यह आराम करने एवं प्रतिगमन (regression) का एक बहाना (excuse) होता है। कुछ लोगों में यह विद्वेष (hostility) तथा आक्रामकता (aggression) दिखलाने का एक तरीका होता है। एलेक्जेण्डर तथा सॉल (Alexander & Saul, 1940) ने अपने अध्ययन में पाया कि एक

महिला शिक्षक जब-जब घबड़ाहट की परिस्थिति में आ जाती थी या किसी डरावने परिस्थिति से घिर जाती थी तो उसमें सामान्य सर्दी (common cold) के लक्षण दिखलाई पड़ते थे।

(ग) अति श्वसन संलक्षण *(Hyperventilation syndrome)*–यह एक ऐसी मनोदैहिक विकृति है जिसमें रोगी जरूरत से ज्यादा एवं जोर-जोर से श्वास लेता एवं छोड़ता है। इस तरह से श्वसन की गहराई एवं तीव्रता (rapidity) दोनों में ही वृद्धि हो जाती है। इस विकृति में रोगी में तरह-तरह के अन्य शारीरिक लक्षण (physiological symptoms) भी विकसित हो जाते हैं। जैसे, इस विकृति में रोगी का सिर उड़ा-उड़ा रहना, चक्कर आना, शरीर सुन्न हो जाना तथा हाथ एवं पाँव में झुनझुनी उत्पन्न होना आदि प्रधान रूप से देखे जाते हैं। रोगी की दृष्टि (vision) धुँधली हो जाती है तथा उसे ऐसा लगता है कि वह अब बेहोश हो जाएगा। कुछ रोगी यह भी बतलाते हैं कि उनकी छाती में भारीपन है तथा हृदय के अगल-बगल दर्द हो रहा है। अध्ययनों से पता चला है कि अतिश्वसन संलक्षण (hyperventilation syndrome) की शुरूआत प्राय: एक ऐसी परिस्थिति से होती है जिसमें रोगी अत्यधिक चिंतित हो जाता है तथा सांवेगिक प्रतिक्रियाएँ अधिक गंभीर हो जातीं हैं। कुछ ऐसे भी केसेज देखे गये हैं जिसमें व्यक्ति जब चिंता स्वप्न (anxiety dream) तथा अन्य दूसरे तरह के भयानक स्वप्न देखता है, तो उसमें अतिश्वसन संलक्षण (hyprerventilation syndrome) विकसित हो जाते हैं।

(घ) यक्ष्मा या टी० बी० *(Tuberclusis)*–यक्ष्मा या क्षय रोग एक ऐसा रोग है जो बेसिलस (bacillus) द्वारा उत्पन्न होता है। इसमें फेफड़ा में प्राय: चिरकालिक सूजन (chronic inflammation) उत्पन्न हो जाता है। रोगी छाती में दर्द महसूस करने लगता है। इस रोग का कारण शारीरिक होने के अलावा मनोवैज्ञानिक (psychological) भी होते देखा गया है। किश्कर (Kisker, 1965) ने एक ऐसा केस (case) का वर्णन किया है जिसमें यह देखा गया है कि रोगी को उस समय तुरंत ही क्षय रोग के लक्षण विकसित हो जाते थे जब वह यह समझता था कि उसे अब उस कमरा को छोड़ना पड़ेगा जो काफी साफ-सुथरा रहता है तथा साथ-ही-साथ उसमें स्वास्थ्य-लाभ के पूर्ण साधन मौजूद हैं। कुछ लोगों ने क्षय रोग से पीड़ित व्यक्तियों के व्यक्तित्व शीलगुणों (personality traits) का अध्ययन किया है और पाया है कि ऐसे व्यक्यिों में सामाजिक संपर्क (social contacts) स्थापित करने की अक्षमता, लैंगिक असंयमी (sexual promiscuity), द्वैधवृत्ति संबंध (ambivalent relationship), आत्म-निष्फलता (feeling of self-defeat) की भावना आदि की प्रधानता होती है। ऐसे रोगियों में कभी-कभी विषाद (depression) की भी अवस्था पायी जाती है जो बीच-बीच में आक्रामता (aggression) तथा विद्वेषता से प्रस्फुटित होती है। ऐसे रोगी स्वभाव से संवेदनशील, चिंतित एवं सांवेगिक रूप से चंचल (emotionally volatile) होते हैं। फर्लाशीम (Flarsheim, 1958) ने अपने अध्ययन में पाया कि जिन व्यक्तियों का शारीरिक बनावट (body type) एसथेनिक प्रकार (asthenic type) का अर्थात् लंबा कद परंतु दुबला-पतला शरीर होता है, उनमें क्षय रोग विकसित होने की संभावना अधिक होती है।

इस तरह से हम देखते हैं कि मनोदैहिक श्वसन विकृतियों के कई प्रकार हैं। इन प्रकारों में श्वसनी दमा (bronchial asthma) सबसे सामान्य मनोदैहिक श्वसन विकृति है जिसमें मनोवैज्ञानिक की रुचि अधिक रही है।

मनोदैहिक त्वचा-संबंधी विकृतियाँ
(Psychophysiologic Skin Disorders)

मनोदैहिक त्वचा-संबंधी विकृति में उन विकृतियों को रखा जाता है जो त्वचा से संबंधित हैं। मनोवैज्ञानिकों एवं मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) में आम सहमति इस बात की है कि त्वचा एक ऐसा माध्यम है जिससे सांवेगिक प्रतिक्रियाओं का स्पष्ट झलक मिलता है। जैसे, जब व्यक्ति किसी परिस्थिति में लज्जित हो जाता है, तो उसके चेहरे की त्वचा में एक विशेष रंग उत्पन्न हो जाता है जिसे देखकर यह स्पष्ट रूप से समझ लिया जाता है कि वह लज्जित हो गया है। उसी तरह से तीव्र डर की अवस्था में त्वचा के छोटे-छोटे केशिकानलियों (capillaries) से खून बाहर चले जाते हैं जिससे त्वचा सूखा नजर आती है और व्यक्ति के चेहरे पर हवाई उड़ते नजर आते हैं। इस तरह से त्वचा सांवेगिक तनाव (emotional stress) अभिव्यक्ति करने का एक प्रमुख माध्यम होता है क्योंकि इसमें छोटे-छोटे बहुत सारे रक्त नलिकाएँ (blood vessels) होती हैं जिनका नियंत्रण एवं संचालन स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (autonomic nervous system) द्वारा होता है। इसके अलावा, त्वचा विकृतियों (skin disorders) में एक महत्त्वपूर्ण सांवेगिक कारक होता है, जो अन्य रोगों में नहीं होता है और वह यह है कि त्वचा-संबंधी विकृतियों को छिपाया नहीं जा सकता है और इस विकृति को आसानी से दूसरों द्वारा देखा जा सकता है। त्वचा-संबंधी विकृति (skin disorders) में निम्नांकित विकृतियाँ अधिक सामान्य (common) हैं–

(क) न्यूरोडरमैटोसिस (Neurodermatosis)

(ख) खरोंचना एवं खुजलाना (scartching and itching)

इन दोनों का वर्णन इस प्रकार है–

(क) न्यूरोडरमैटोसिस *(Neurodermatosis)*–न्यूरोडरमैटोसिस (neurodermatosis) से तात्पर्य वैसे त्वचा-संबंधी विकृतियों (skin disorders) से होता है जो सांवेगिक अस्थिरता (emotional instability) की परिस्थिति में व्यक्ति में उत्पन्न होते हैं। इस श्रेणी में अनामिका (ring finger) का डरमैटोसिस या त्वचाशोथ (dermatosis), अँगूठा का त्वचाशोथ तथा होठों का त्वचाशोथ (dermatosis) प्रमुख हैं। कुछ ऐसे केसेज देखे गये हैं जिसमें अनामिका (ring finger) में त्वचा शोथ (dermatosis) उत्पन्न हो गया था अर्थात् अँगूठी के ठीक नीचे एवं उसके अगल-बगल की त्वचा में फूलन, लाली, लहर, फफोले आदि उत्पन्न हो गये थे। पहले तो इसका कारण अँगूठी के नीचे जमी कुछ गंदगी तथा धातु (metal) के प्रति प्रतिक्रिया समझी गयी। परंतु बाद में जब अँगूठी को दूसरी अँगुली में पहना गया तो इस तरह का शोथ (dermatosis) नहीं देखा गया। इसका स्पष्ट मतलब यह था कि इसका कारण कुछ मनोवैज्ञानिक था। एक अमेरीकन महिला की अनामिका (ring finger) में इसी ढंग का शोथ (dermatosis) विकसित हो गया था जिसका कारण उसका एक ऐसे युवक के साथ शादी निश्चित होना था जिसे वह नहीं पसंद करती थी। जब वह शादी टुट गयी, तो उसकी अनामिका का शोथ (dermatosis) भी अपने आप समाप्त हो गया। इस केस से यह बिल्कुल ही स्पष्ट हो जाता है कि अनामिका का त्वचाशोथ (ringfinger dermatosis) में सांवेगिक कारकों का महत्त्व होता है।

अँगूठा का त्वचाशोथ (dermatosis) भी मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) एवं मनोवैज्ञानिकों के लिए विशेष रुचिकर विषय रहा है तथा उसमें भी इनलोगों ने मनोवैज्ञानिक कारकों (psychological factors) की प्रधानता पायी है। कुछ मनोविश्लेषकों (psychoanalysts) का मत है कि अँगूठा का त्वचाशोथ (dermatosis) उन व्यक्तियों में पाया जाता है जो अपरिपक्व (immature) प्रकृति के होते हैं और जो जिन्दगी की समस्याओं से हमेशा जूझते रहते हैं। ऐसे लोगों में मुखावस्था (oral stage) में लौट जाने की तीव्र प्रकृति होती है क्योंकि इस अवस्था की क्रियाओं से उन्हें शकुन मिलता है। फलस्वरूप, ऐसे लोग बड़े होकर भी अँगूठा चूसना प्रारंभ कर देते हैं क्योंकि इस अवस्था में उन्हें स्तनपान (breast feeding) तो माँ नहीं करा सकती है या दूध के बोतल में दूध भरकर तो उसे नहीं पिला सकती हैं। परन्तु चूँकि ऐसे लोग बड़े होकर अँगूठा चूसना एक असामाजिक एवं बचकाना कार्य समझते हैं, अत: उनमें मानसिक संघर्ष (mental conflict) होता है जिसका समाधान वे आसानी से अँगूठा में त्वचाशोथ (dermatosis) विकसित करके कर लेते हैं। शोथ चूँकि एक तरह का घाव ही होता है, अत: स्वभावत: वे उसे अब चूस नहीं पाते हैं और उनकी समस्या का समाधान भी हो जाता है। मनोविश्लेषकों की इस व्याख्या से स्पष्ट है कि अँगूठा का त्वचाशोथ (thumb dermatosis) में सांवेगिक कारकों (emotional factors) की भूमिका काफी होती है।

होठों के त्वचाशोथ (lips dermatosis) में भी सांवेगिक कारकों (emotional factors) की भूमिका पायी गयी है। ब्राउन (Brown, 1977) के अनुसार होठों के त्वचाशोथ उन किशोरियों (adolescent girls) में तेजी से विकसित होता है जिसमें किसी युवक का प्यार पाने एवं चुम्बन किये जाने की तीव्र लालसा होती है। परंतु सामाजिक बंधन एवं नैतिक समस्याओं (moral problems) के कारण उनकी लालसा पूरी नहीं हो पाती है जिससे उनमें कुंठा (frustration) एवं सांवेगिक तनाव उत्पन्न हो जाता है जिससे बचाव के रूप में होंठ में त्वचाशोथ (dermatosis) उत्पन्न हो जाता है। ब्राउन (Brown, 1977) के इस व्याख्या से स्पष्ट है कि होठों के त्वचाशोथ (dermatosis) की उत्पत्ति में भी सांवेगिक कारकों (emotional factors) की भूमिका होती है।

(ख) खरोंचना एवं खुजलाना *(scratching and itching)*–कुछ ऐसे सबूत भी मिले हैं जिनमें देखा गया है कि शरीर के किसी भाग में अधिक खुजलाहट एवं खरोंचने की प्रवृत्ति के पीछे मनोवैज्ञानिक कारण (psychological factor) होता है। किश्कर (Kisker, 1964) के अनुसार इस तरह की प्रवृत्ति का कारण दूसरों के प्रति आक्रामकता (aggression) दिखलाने की इच्छा का एक तरह से विस्थापन (displacement) होना है। जब व्यक्ति किसी कारण अपनी आक्रामकता दूसरों के प्रति नहीं दिखला सकता है तो उस आक्रमकता को अपने प्रति विस्थापित कर देता है जिसकी अभिव्यक्ति वह अत्यधिक खुजलाहट तथा खरोंचने के रूप में करके करता है।

इस तरह से हम देखते हैं कि त्वचा संबंधी विकृतियाँ (skin disorders) भी मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न होती हैं। इन विकृतियों में न्यूरोडरमोटैशिश (neurodermotasis) प्रधान है।

मनोदैहिक जनन-मूत्र विकृतियाँ
(Psychophysiologic Genitourinary Disorders)

इस तरह की विकृतियाँ भी आजकल काफी देखने को मिलती हैं। इन विकृतियों का संबंध शरीर के श्रोणीय क्षेत्र (pelvic region) एवं इसके लैंगिक कार्यों (sexual functions) तथा पेशाब-पैखाना करने संबंधी कार्यों से होता है। ऐसी विकृतियों का कारण दैहिक (physical) भी हो सकता है तथा मनोवैज्ञानिक (psychological) भी। जब ऐसी विकृतियाँ मनोवैज्ञानिक कारकों (psychological factors) से उत्पन्न होती हैं, तो इसे मनोदैहिक जनन-मूत्र विकृति (psychophysiological genitourinary disorders) की संज्ञा दी जाती है। इस श्रेणी में आने वाली प्रमुख विकृतियाँ निम्नांकित हैं—

(क) पेशाब-संबंधी विकृति (Urinary distrubances)

(ख) मासिक धर्म संबंधी विकृति (Menstrual disorders)

(ग) स्वत: गर्भपात (Spontaneons abortion)

(घ) लैंगिक कार्यों की विकृतियाँ (Disturbances of sexual function)

इन सबका वर्णन निम्नांकित है—

(क) पेशाब संबंधी विकृति *(Urinary disturbances)*—चैपमैन (Chapman, 1959) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बतलाया कि पेशाब-संबंधी क्रियाओं का संबंध व्यक्ति के सांवेगिक अवस्थाओं से होता है। ऐसे भी मूत्रण क्षेत्र (urniary tract) में स्वायत्त तंत्रों (autonomic fibers) की प्रचुरता होती है, अत: इसका संबंध सांवेगिक अवस्थाओं से होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इस तरह के संबंध का ही परिणाम है कि कुछ लोगों में दूसरों की उपस्थिति में पेशाब नहीं उतरता है या यदि उन्हें बोतल आदि में पेशाब करने को कहा जाय, तो उन्हें पेशाब होता ही नहीं है या बहुत थोड़ा होता है। स्ट्राब (Straub, 1989) ने एक प्रयोग किया जिसमें पाया कि पेशाब करने की बारंबारता (frequency) का संबंध चिन्ता, आक्रामकता तथा मानसिक संघर्षों (mental coflict) से काफी होता है। उसी तरह से पेशाब को बहुत देर तक रोक रखने की प्रवृत्ति का संबंध सांवेगिक दमन (emotional repression) तथा प्रत्याहारी इच्छाओं (withdrawal tendencies) से अधिक होता है।

कुछ मनश्चिकित्सकों (psychiatrists) ने बालकों में पाये जाने वाले ऐसी विकृतियों का अध्ययन किया है। एक ऐसी प्रमुख विकृति का नाम 'इन्यूरेसिस' (enuresis) या बिछावन गीला करना (bed-wetting) है। कुछ बालकों में बिछावन गीला करने की बुरी आदत होती है। ऐसे बालकों का जब मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन (psychoanalytic study) किया गया तो पाया गया कि इनमें अपने माता-पिता तथा अन्य ऐसे ही लोगों जैसे अभिभावकों (guardians) के प्रति उनमें तीव्र दोष एवं विद्वेष (hostility) की भावना थी। वे बिछावन गीला कर अपने इस दमित दोष एवं विद्वेष की भावना की अभिव्यक्ति करते हैं।

(ख) मासिक धर्म संबंधी विकृतियाँ *(Menstrual disorders)*—महिलाओं में प्रत्येक मासिक धर्म होने के पहले एक खास तरह की सांवेगिक प्रतिक्रिया (emotional reaction) पायी जाती है जिसे प्राक्मासिक धर्म संबंधी तनाव (premenstrual tension) कहा जाता है।

इस तरह के तनाव में महिलाएँ प्राय: तुनुकमिजाजी प्रवृत्ति की हो जातीं हैं और भिन्न-भिन्न मात्राओं में चिन्ता (anxiety) पायी जाती है। सामान्यत: मासिक धर्म प्रारंभ होने पर तनाव कम जाता है परन्तु कभी-कभी मासिक धर्म प्रारंभ होने पर गंभीरता और भी अधिक बढ़ जाती है। इन लक्षणों में बेचैनी, एकाग्रता (concentration) की कमी, अनुपयुक्त सांवेगिक प्रस्फोटन (emotional outbursts), तुच्छ घटनाओं पर कस कर बरस जाना आदि मूल रूप से देखे जाते हैं। शारीरिक लक्षणों में सिरदर्द, कमर में दर्द तथा अनिद्रा प्रधान है। मासिक धर्म से संबंधित दो तरह की विकृतियाँ मूल रूप से देखने को मिलती हैं—डाइस्मेनोरिया (dysmenorrhea) तथा मनोजनिक एमनोरिया (psychogenic amenorrhea) प्रधान है। डाइस्मेनौरिया (dysmenorrhea) में मासिक धर्म होने के साथ-साथ तीव्र दर्द होता है। अध्ययनों से पता चला है कि ऐसी महिलाओं में आक्रामकता (aggressiveness) तो अधिक थी ही साथ-ही-साथ इनमें दूसरों पर निर्भरता (dependency) वयस्कावस्था (adulthood) आ जाने पर भी अधिक थी। इनमें दूसरों की सहानुभूति एवं सुरक्षा पाने की लालसा भी तीव्र थी। क्रोगर तथा फ्रीड (Kroger & Freed, 1975) के अध्ययन के अनुसार डाइस्मेनोरिया (dysmenorrhea) की शिकायत अधिकतर उन महिलाओं में होती है जिनमें पुरुष-सुलभ शारीरिक गुणों (masculine physical traits) की प्रधानता होती है। मनोजनिक एमनोरिया (psychogenic amenorrhea) में मासिक धर्म की कमी या कभी-कभी पूर्णत: यह बिना किसी कायिक कारण (organic cause) के ही रुक जाता है। क्रोगर (Kroger, 1974) के अनुसार इस तरह की विकृति का संबंध कुछ खास-खास कारक जैसे सांवेगिक आघात (emotional shock), लैंगिक संघर्ष (sexual conflict), गर्भ-धारण करने की तीव्र इच्छा, माता या पिता की मृत्यु से उत्पन्न सांवेगिक तनाव आदि से मूल रूप से पाया गया है।

(ग) स्वत: गर्भपात *(Spontaneous abortion)*—कुछ अध्ययनों से यह पता चलता है कि स्वत: गर्भपात का कारण कभी-कभी सांवेगिक तनाव (emotional stress) भी होता है। स्क्विीअर तथा डनवार (Squier & Dunbar, 1946) ने अपने अध्ययन में पाया कि जब डाक्टर तथा नर्स द्वारा असंतोषजनक एवं चिन्ता उत्पन्न करने वाला टिप्पणी (remarks) किया जाता है, तो इससे रोगी में अनावश्यक चिन्ता उत्पन्न हो जाती है और उनका संवेगात्मक स्तर (emotional level) बढ़ जाता है जिससे अन्त में गर्भपात (abortion) हो जाता है। ग्रिम (Grimm, 1962) ने एक अध्ययन किया जिसमें उन्होंने महिलाओं के दो समूहों का तुलनात्मक अध्ययन किया। एक समूह में वैसी महिलाएँ थी जिन्हें कई बार स्वत: गर्भपात हो चुका था तथा दूसरे समूह में वैसी महिलाएँ थी जिन्हें कभी गर्भपात नहीं हुआ था। उन्होंने पाया कि इन दोनों तरह की महिलाओं के व्यक्तित्व शीलगुणों (presonality traits) में काफी अन्तर था। उन्होंने स्पष्ट रूप से पाया कि गर्भपात करने वाली महिलाओं में सांवेगिक नियंत्रण (emotional control) कम था, दूसरों पर निर्भरता अधिक थी, उनमें दोष-भाव (guilt feeling) अधिक थी। इस अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वत: गर्भपात के कुछ मनोवैज्ञानिक कारण भी होते हैं।

(घ) लैंगिक कार्यों की विकृतियाँ *(Disturbances of sexual functions)*—जननमूत्र विकृतियों (genitourinary disorders) में कई तरह की लैंगिक विकृतियाँ (sexual disturbances) भी सम्मिलित हैं। मनोनपुंसकता (psychic impotency) तथा मंदकामुकता (frigidity) ऐसे लैंगिक विकृतियों में प्रधान है। मनोनपुंसकता (psychic impotency) में पुरुष कुछ सांवेगिक करणों से लैंगिक क्रिया करने तथा उससे आनन्द उठाने में असमर्थ रहता है। ऐसी अवस्था गंभीर हो जाने से पुरुष को किसी भी हालत में लैंगिक कार्य के लिए तैयार नहीं किया जा सकता है। पुरुषों में इस तरह के मनोनपुंसकता (psychic impotency) के कई कारण बतलाये गये हैं। जैसे, कुछ ऐसे केसेज में पुरुष को अपने विपरीत लिंगी के साथ किसी प्रकार का तीव्र मानसिक संघर्ष का होना बतलाया गया है। कुछ केसेज में इसका कारण अव्यक्त समलिंगता (latent homosexuality) बतलाया गया है। डबलिन (Dublin, 1975) के अनुसार जब पुरुष यह देखता है कि उसका महिला सहयोगी (female partner) लैंगिक कार्य में अधिक अभिरुचि नहीं ले रही है, तो इससे भी पुरुष में मनोनपुंसकता (psychic impotency) विकसित हो जाती है। मनोनपुंसकता (psychic impotency) की उत्पत्ति में सांवेगिक तनाव के महत्व को एक मशहूर केस द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है—एक रात एक व्यक्ति ने यह स्वप्न देखा कि वह अपने दोस्त की पत्नी के साथ संभोग किया है। नींद टूटने पर इससे उसमें सांवेगिक तनाव की स्थिति बन गयी जो धीरे-धीरे मजबूत होती चली गयी। यद्यपि स्वप्न को दमित कर (repressed) दिया गया परन्तु इसका प्रभाव व्यक्ति के शरीर पर इतना हुआ कि उसमें नपुंसकता (impotency) विकसित हो गयी। मनोचिकित्सा (psychotherapy) के दौरान बाद में उस स्वप्न के स्परूप पर प्रकाश डाला गया और नपुंसकता के साथ उस स्वप्न के संबंध को उस व्यक्ति को समझाया गया तब बाद में जाकर लैंगिक अक्षमता यानी नपुंसकता समाप्त हो गयी।

महिलाओं (females) में मनोनपुंसकता (psychic impotency) के तुल्य (equivalent) को मंदकामुकता (fridigity) की संज्ञा दी गयी है। इस तरह की अवस्था में महिलाओं में लैंगिक भाव (sexual feeling) की कमी पायी जाती है। कुछ महिलाओं में तो लैंगिक भाव (sexual feeling) की हल्की-फुल्की कमी होती है परन्तु कुछ महिलाओं में इस तरह के भाव की कमी अत्यंत गंभीर रूप से हो जाती है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह पता चला कि महिलाओं में मंदकामुकता (frigidity) के कई कारण बतलाये गए हैं जिनमें अत्यधिक दोष-भाव (excessive guilt feelings), रोग हो जाने का डर या घायल हो जाने का डर, विपरीत लिंग के व्यक्तियों के साथ विद्वेष, संघर्षपूर्ण लैंगिक लगाव (conflicting sexual attatchment) तथा अव्यक्त समलिंगता (latent homosexuality) आदि अधिक प्रधान हैं। फ्रेंच एवं एलेक्जेण्डर (French & Alexander, 1948) के अध्ययन के अनुसार महिलाओं में मंदकामुकता (frigidity) एक तरह से आत्म-पर्याप्तता (self-sufficiency) तथा प्रभुत्व (dominance) की मनोवृत्ति का द्योतक होता है। कुछ महिलाएँ लैंगिक क्रिया में अपने निष्क्रिय भूमिका (passive role) को स्वीकार नहीं करती है और यह भावना धीरे-धीरे इतनी मजबूत हो जाती है कि उसमें मंदकामुकता (frigidity) के लक्षण स्पष्ट होने लगते हैं।

इस तरह से स्पष्ट हुआ कि मनोदैहिक जननमूत्र विकृतियों (psychophysiologic genitourinary disorders) में कई तरह की विकृतियाँ (disorders) आती है। इन विकृतियों में स्वत: गर्भपात (spontaneous abortion) तथा लैंगिक कार्यों की विकृतियाँ (disturbances of sexual function) तुलनात्मक रूप से अधिक सामान्य हैं।